कविगुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर को नोबेल पुरस्कार प्राप्त होने के शताब्दी समारोह के उद्घाटन के अवसर पर भारत के राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी का अभिभाषण

शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल : 19.12.2012

मुझे कविगुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर को नोबल पुरस्कार प्राप्त होने के शताब्दी समारोहों का उद्घाटन करते हुए बहुत प्रसन्नता हो रही है, जो कि विश्व भारती, शांतिनिकेतन तथा चीन अध्ययन संस्थान, दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित 'टैगोर और विश्व के बीच एकात्मता : चीन के विशेष संदर्भ सहित, संस्कृति और साहित्य' नामक इस अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी से शुरू हो रहे हैं।

आज जब हम गुरुदेव को वर्ष 1913 में प्राप्त एशिया के प्रथम नोबल पुरस्कार की शताब्दी के कगार पर खड़े हैं, हम बहुत श्रद्धा के साथ, विशेषकर चीन के संदर्भ में,स्व और विश्व के बीच एकात्मता के उनके विचार का स्मरण करते हैं।

नोबल प्रशस्ति पत्र में रवीन्द्रनाथ की "गहन संवेदनशील, नवीन तथा सुंदर कविता जिसके द्वारा उन्होंने अपने उत्कृष्ट कौशल से अपने काव्यमय विचारों को, अपने स्वयं के अंग्रेजी शब्दों में अभिव्यक्त करके पश्चिम के साहित्य का एक भाग बना दिया" का उल्लेख किया गया है। नोबल कमेटी की रिपोर्ट में उल्लेख है कि "दैवीय शक्ति का ऐसा सम्मोहक चित्रण तथा सभी प्रकार के जीवों के प्रति उनका प्रेम" केवल "उनके अपने देश के लोगों के जीवन के चित्रण" से पूर्णता प्राप्त करता है क्योंकि वह आत्मा की स्वयं प्रकृति के साथ 'निरंतर बढ़ती समरसता' का स्पर्श करता है।

एक दूसरे की संस्कृति और साहित्य के माध्यम से विश्व के सभ्यतागत संगम का विचार एक ऐसा विचार था जिसने टैगोर को आकर्षित किया। विश्व भारती में, उन्होंने कहा था कि हमारी सभ्यता में जो कुछ भी उत्तम है प्रत्येक व्यक्ति उस पर अपना अधिकार जता सकता है। विश्व भारती का आदर्श वाक्य 'यत्र विश्वम् भवति एक नीडम्' अर्थात् जहां संपूर्ण विश्व एक ही नीड में निवास करता है, वास्तव में जाति, वर्ग अथवा देशों की सीमाओं से परे समानता, आदान-प्रदान तथा समरसता के बहुसांस्कृति वैश्विक विचार का मूर्तन था। नोबल पुरस्कार ने वास्तव में 'विश्व मानव में अविचल विश्वास' को सम्मानित किया था।

टैगोर ने आत्म एवं विश्व के बीच एकात्मता के पैटर्न में एशिया की विशेष भूमिका को महसूस किया था। परिणामस्वरूप, जब उन्हें पीकिंग लेक्चर एसोसियेशन से निमंत्रण मिला तो उन्होंने लिखा, "जब चीन से मेरे पास निमंत्रण पहुंचा, तो मुझे लगा कि यह स्वयं भारत के लिए निमंत्रण है और उसका विनम्र पुत्र होने के नाते मुझे इसे स्वीकार करना होगा।" इसके बाद उन्होंने कहा कि "कवि का कर्तव्य है, उस वाणी को आकर्षित करना जो कि वायुमंडल में अनसुने रूप में विद्यमान है; ऐसे स्वप्न में विश्वास जगाना जो कि अभी अपूर्ण है। मैं चीन तथा संपूर्ण एशिया के अपने पड़ोसियों के बीच मित्रता के इस मार्ग को खोलने में सहयोग करने के लिए आपकी सहायता चाहता हूँ।" इसी मिशन के साथ उन्होंने 20 मार्च, 1924 को चीन प्रस्थान से पूर्व लिखा था, "मुझे उम्मीद है कि हमारी इस यात्रा से चीन और भारत के बीच सांस्कृतिक और आध्यात्मिक संपर्क फिर से स्थापित हो पाएंगे।"

टैगोर चीन में क्या ढूंढ़ रहे थे? उन्होंने वर्ष 1881 से इम्पीरियल सरकार के अधीन दोनों देशों द्वारा सहे जा रहे उत्पीड़न का

उल्लेख किया था। परंतु उन्होंने इसी के साथ सीमाओं के आर-पार बुद्ध के संदेशों के माध्यम से आध्यात्मिकता, अहिंसा तथा सहिष्णुता के विचारों से प्रेरित आंदोलनों का भी गहराई से उल्लेख किया था। वह इन्हीं ऐतिहासिक संबंधों को फिर से मजबूत करना चाहते थे।

यह भी रोचक तथ्य है कि टैगोर के नोबल पुरस्कार जीतने से चीन के अंदर एशियाई गौरव का भी प्रस्फुटन हुआ। काफी पहले वर्ष 1915 में ही उनकी कविताओं और कहानियों का चीनी भाषा में अनुवाद हो चुका था। वर्ष 1924 में कवियों और बुद्धिजीवियों ने जिस उत्साह के साथ उनका स्वागत किया, वह इस बात का प्रतीक है कि वह चीनी साहित्यकारों के बीच कितने लोकप्रिय थे। उन्हें झू झेन डान अर्थात् 'भारतीय सूर्य' का जो खिताब दिया गया था उसने उनको उन प्राचीन भारतीय बौद्ध संतों के बीच स्थापित कर दिया जिन्होंने सीमाओं के आर-पार विचारों के अबाध आदान-प्रदान का मार्ग प्रशस्त किया था। वर्ष 1924 में चीन में टैगोर के व्याख्यानों का मर्म था कि दोनों एशियाई पड़ोसियों को अपने अंत:सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत करने की जरूरत है तथा दुनियावी लोभ और ताकत प्राप्त करने की ललक के बजाय अपने नागरिकों के कल्याण के लिए प्रयास करने चाहिए।

तथापि संबंधों के सेतु तैयार करने के टैगोर के प्रयास केवल दिवास्वप्न भर नहीं थे। विश्व भारती में जहां उन्होंने विश्व संस्कृतियों के अध्ययन की शुरुआत की थी, सिल्वन लेवी, विदुशेखर शास्त्री तथा लिन वो जियांग के सहयोग से वर्ष 1921 में ही चीनी अध्ययन कार्यक्रम का शुभारंभ कर दिया गया था। जब वर्ष 1927 में टैगोर सिंगापुर में तान युन शान से मिले तो एक भारी बदलाव आया। वर्ष 1928 में तान युन शान की शांतिनिकेतन की यात्रा के बाद चीन में चीन-भारत सोसाइटियां स्थापित हुईं और भारत में अप्रैल, 1937 में चीना भवन के उद्घाटन का मार्ग प्रशस्त हुआ। टैगोर ने जिस एकात्मता का सपना देखा था वह तान युन शान की सहायता से फलीभूत हुआ। खासकर चीना भवन ने लम्बे समय से, बहुत सी अप्रयाप्य पुस्तकों का रखरखाव किया है, संस्कृतियों के बीच सेतु का कार्य किया है, तथा चीन के साथ जनता के पारस्परिक आदान-प्रदान में सबसे आगे रहा है जो कि विश्व सौहार्द के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वर्ष 1957 में चीनी प्रधानमंत्री झाउ एनलाई को विश्वभारती द्वारा 'देशिकोत्तम' की उपाधि प्रदान की गई थी, जिससे चीन और भारत के संबंधों में एक नए अध्याय का आरंभ हुआ।

हम प्राय: राष्ट्रों को कठोर सीमाओं वाले विशाल भूखंडों के रूप में जानते हैं। परंतु टैगोर जैसे स्वप्नद्रष्टाओं ने हमें यह बताया कि साहित्य, इतिहास तथा संस्कृतियां मानवता के साझे आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा वह राष्ट्रीय सीमाओं से परे होते हैं। वास्तव में साझी मानवता अथवा विश्वबोध की इसी भावना का टैगोर ने अपने साहित्य में, अपने संगीत में निरूपण किया है तथा उसे ही विश्व भारती में साकार करने का प्रयास किया है। इसलिए यह उचित है कि एशिया के प्रथम नोबल पुरस्कार का समारोह विश्व-भारती में शुरु किया जाए और यह एक ऐसा अवसर हो जब हम न केवल अपने ऐतिहासिक संबंधों बल्कि भविष्य में सहयोग और प्रगाढ़ आदान-प्रदान की जरूरत पर भी बल दें।

भारत और चीन वैश्विक आदान-प्रदान के एक ऐसे शानदार चरण की ओर बड़ी छलांग लगाने जा रहे हैं जहां विश्व कल्याण के लिए विचारों और संसाधनों का उपयोग, विश्व शांति और कल्याण का प्रमुख आधार हो सकता है। इस प्रकार यह संगोष्ठी न केवल एक व्यक्ति के नोबल पुरस्कार का समारोह है बल्कि यह आदान-प्रदान, सहयोग तथा बहुसांस्कृतिकता के विचार की संभावनाओं का भी समारोह होगा।

मैं विश्व-भारती को सार्वभौमिक सहयोग तथा समावेशिता की उस सच्ची भावना के लिए बधाई देता हूं जो इसने गुरुदेव की 150वीं वर्षगांठ मनाने के दौरान दिखाई है। प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय समिति तथा राष्ट्रीय कार्यान्वयन

समिति, जिसका मैं वित्त मंत्री के रूप में अध्यक्ष था, के मार्गदर्शन में विश्व-भारती ने सरकारी एजेंसियों के साथ पूर्ण सहयोग से कार्य करते हुए संपूर्ण विश्व के समक्ष टैगोर की कल्पना, उनकी उपलब्धियां तथा उनके सर्जन को लाने का प्रयास किया है।

आइए, हम इस अवसर पर जीवन के बारे में उनके सतत् विचार का स्मरण करें : "मैं यह मानता हूं कि हम आज जो कष्ट उठा रहे हैं, वह विस्मृति, एकांतता के संकट के कारण है क्योंकि हम मानवता का स्वागत करने के अवसर से तथा विश्व के साथ ऐसी सर्वोत्तम वस्तु को बांटने से चूक गए हैं जो हमारे पास उपलब्ध है। भारत की आत्मा ने सदैव एकात्मता के आदर्श का उद्घोष किया है। एकात्मता का यह आदर्श किसी भी वस्तु को, किसी भी जाति को अथवा किसी भी संस्कृति को अस्वीकार नहीं करता।"

स्टाकहोम में 26 मई, 1921 को एक तात्कालिक व्याख्यान में टैगोर ने एक सवाल उठाया था, "मेरी कविताओं को इतनी अधिक स्वीकृति और सम्मान मिलने की क्या वजह हो सकती है?" उसी व्याख्यान में रवीन्द्र नाथ ने सुझाया था कि, "मेरे देशवासी मेरे साथ इस सम्मान को बांटेंगे।" स्पष्टत: कवि के लिए यह कोई वैयक्तिक प्रशंसा नहीं थी—उपनिवेशकालीन भारत में यह नई भारतीय अस्मिता का प्रकटीकरण था जो कि वैश्विक संदर्भ में परंपरागत और अधुनातन का समावेश करने में सफल रहा। इसी के साथ, यह इस बात की भी स्वीकृति थी कि उनके साहित्य में भारतीय दर्शन और साहित्य की गूढ़ सच्चाइयों और आरोह-अवरोहों की जो अभिव्यक्ति है, वह विश्व में फिर से प्रवाहमान हो सकती है।

वास्तव में यह टैगोर की एकात्मता और आनंद—दैविक शक्ति के समक्ष समर्पण का आनंद, स्व के समर्पण का आनंद, प्रकृति के परम विस्तार में क्रीड़ा और मानवता के प्रत्येक अंश का आस्वादन—की पूर्ण अनुभूति ने ही उन्हें वर्ष 1913 में प्रासंगिक बनाया था और आज भी उन्हें प्रासंगिक बनाए हुए है।

टैगोर ने नोबल पुरस्कार बहुत ही अनासक्ति तथा विनम्रता के साथ ग्रहण किया था क्योंकि यह वैश्विक सौहार्द्र, संस्कृतियों के आदान-प्रदान तथा जीवन के आनंद और गरिमा के उत्सव के उद्घोष का दस्तावेज था। सौ वर्ष बीत चुके हैं। यह शताब्दी समारोह वास्तव में, सीमाओं की समाप्ति, मानवीय प्रेम तथा नि:स्वार्थ सेवा के उस विचार की सुंदरता को एक श्रद्धांजलि होगी।

भारत और विश्व भारती, टैगोर की अपनी कविता को साकार करते हुए उन्हें श्रद्धांजलि दें :

"जहां मन में नहीं कोई भय,
जहां मस्तक रहे ऊंचा,
जहां ज्ञान हो निर्मूल्य,
जहां विश्व छोटी-छोटी घरेलू दीवारों से न हो गया हो विखंडित"

देवियो और सज्जनो, आइए, इस शताब्दी समारोह में सम्मिलित होकर हम इस स्वप्न को अपनाएं।

धन्यवाद,

जय हिंद!